कला और संगीत

डॉ0 किरन शर्मा
असि0प्रोफे0, संगीत विभाग
आर0जी0पी0जी0 कॉलेज, मेरठ
Email: arunitas93@gmail.com

प्राप्तिः 23.02.2021
स्वीकृतः 15.03.2021

सारांश

ललित कलाएं मनुष्य की सौन्दर्य चेतना की प्रतीक हैं। कला की विशेषता है आनंद प्रदान करना। सौन्दर्य ललित कलाओं का विशिष्ट गुण है। प्रत्येक ललित कला चाहे वह वास्तु कला हो, मूर्तिकला हो, चित्रकला हो, संगीत अथवा काव्य कला हो, सभी का उद्देश्य अपनी कलाकृति के माध्यम से सौन्दर्य एवं रस की अभिव्यक्ति है। सौन्दर्य का विवेचन पाश्चात्य एवं भारतीय दोनों ही परम्पराओं में हुआ है। दोनों ही में कला का अन्तिम लक्ष्य सौन्दर्य की अभिव्यक्ति है, वह अभिव्यक्ति जो सुनने वाले को आनंदित करें। सौन्दर्य का रस के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। कला की सुन्दर अभिव्यंजना ही सौन्दर्य का आधार है। इससे प्राप्त आनंद ही सौन्दर्यनुभूति है। विशुद्ध संगीत से विशुद्ध रस आनंद की प्राप्ति होती है। संगीत में रसानुभूति के तीन प्रमुख गुण माधुर्य, ओज एवं प्रसाद है। इसके अतिरिक्त विविध भाव एवं काकु प्रयोग भी सौन्दर्य के उपादान हैं। जो राग की रंज्जकता को पढ़ाने में सहायक हैं। हम कह सकते है कि संगीत में निहित रंज्जक तत्व ही सौन्दर्य के प्रतीक है।

मुख्य शब्दः *सौन्दर्य, कला, अनुकृति, अनुभूति, रस,अभिव्यक्ति, रंज्जकता, स्वर सामंजस्य, संतुलन।*

प्रस्तावना

कला का उद्भव सौन्दर्य की मूलभूत प्रेरणा से हुआ है। कला भावों की सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति है। मनुष्य ने इस धरती पर अपने अभ्युदय के साथ ही ईश्वर द्वारा प्रदप्त प्राकृतिक सौन्दर्य के दर्शन किए हैं। इसी सौन्दर्य से प्रेरित होकर वह स्वयं अनेक सुन्दर कलाकृतियों का सृजन करने लगा। कला के माध्यम से ही मनुष्य अपने भावों एवं विचारों की सार्थक अभिव्यक्ति करता है। इस अभिव्यक्ति का आधार ईश्वर, प्रकृति, आन्तरिक अनुभूति, बाह्य प्रभाव अथवा सौन्दर्यानुभूति कुछ भी हो सकता है। कला में भावों की अभिव्यक्ति के साथ सौन्दर्य की अभिव्यक्ति भी साकार रूप प्राप्त करती है।

भारतीय साहित्य में कला को शिल्प कहा गया है। तैत्तरीय उपनिषद में कहा गया है–

''द्विवत शिल्पम् अवतलम्'' अर्थात कला का स्वर्ग से, दूसरे शब्दों में प्रकृति से अवतरण हुआ है।[1] वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार ''कला किसी विचार या कल्पना को साकार रूप देती है। कला का यही रहस्य है कि उसमें लोक जीवन की सांस्कृतिक परम्परा की व्यवस्था होती है। भारतीय कला परम्परा के अनुसार कला भावों का पृथ्वी पर अवतरण है।

वस्तुतः मनुष्य स्वभावगत सृजनशील प्राणी है वह स्वयं नित नवीन सृजन को देखने एवं करने की ओर उन्मुख रहता है। डा0 कांति चन्द्र पाण्डेय के अनुसार ''कला का अर्थ वह मानवीय क्रिया है जिसका विशेष लक्षण ध्यान से देखना, गणना एवं संकलन करना, मनन एवं चितंन करना तथा स्पष्ट रूप से प्रकट करना है। पाश्चात्य विचारधारा में भी विभिन्न विद्वानों ने कला के सन्दर्भ में अपने विचारों को व्यक्त किया है। अरस्तू ने कला में अनुकरण की प्रवृत्ति को महत्व दिया है। अनुकरण की प्रवृत्ति मनुष्य में स्वभावगत होती है। प्लेटिनस के अनुसार कला यथार्थ मूल्यों एवं आदर्शो की व्याख्या का प्रत्यक्षीकरण है।

प्लेटों ने कला को सत्य की अनुकृति कहा है। इस संदर्भ में हीगेल के विचार भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उनके अनुसार कला ऐन्ट्रिय एवं आध्यात्मिक तत्वों का समन्वय है। कला मनुष्य को सत्य की ओर ले जाती है वे कला में काव्य सौन्दर्य को उच्च स्तर का सौन्दर्य मानते है। ललित कलाओं में हीगेल संगीत कला एवं कात्य कला को श्रेष्ठ स्थान पर रखते है। कला एवं सौन्दर्य एक दूसरे के सहगामी है। हचसेन के अनुसार ''कला का लक्ष्य सौन्दर्य है जिसका सार हममें एकरूपता तथा विविधता दर्षाने में निहित है।

यह स्पष्ट है कि कला वह है जो सौन्दर्य को अभिव्यक्ति करती है तथा कला का लक्ष्य है आनन्द प्रदान करना। विद्वानों के अनुसार सौन्दर्य के तीन प्रकार है– प्रथम रूप का सौन्दर्य, द्वितीय विचार का सौन्दर्य, तृतीय अभिव्यक्ति का सौन्दर्य।

अभिव्यक्ति का यही सौन्दर्य कला की अभिव्यंजना में विशिष्ट स्थान रखता है। इन्द्रियों के माध्यम से रूचि का परिश्कार करना तथा मनुष्य की संवेदनशीलता को जगाना कला का ध र्म है। कला का उद्‌गम मानव जीवन के उद्‌गम से सम्बन्धित है मानव अन्तर्मन में रचनात्मक प्रवृत्ति का होना ही उत्कृष्ट कला सौन्दर्य चेतना का प्रतीक है।

कला की अभिव्यक्ति में प्रत्यक्ष की अपेक्षा अप्रत्यक्ष एवं सत्य की अपेक्षा कल्पना का अधिक महत्व है। कल्पना द्वारा मनुष्य अपनी अनुभूतियों में नये प्रत्यय जोड़ता है फलस्वरूप उसमें नवीन चेतना का जन्म होता है। यही कला का वास्तविक आनंद है।

कला कोई भी हो उसका उद्‌देश्य मानव मन के अमूर्त मनोभावों को मूर्त रूप देना तथा जीवन लक्ष्य को सौन्दर्य की दिव्य अनुभूति कराते हुए आध्यात्मिक उत्थान करना है। ललित कलाओं को मनःस्तत्व कहा गया है जिसका अर्थ है मानसिक सुख अथवा मानसिक आनन्द। ललित कलाएँ सौन्दर्य का साक्षात रूप है जो मन में अद्‌भुत आनंद की सृष्टि कर एक ऐसी लोकोत्तर अवस्था में पहुंचा देती है जिसे ब्रहमानन्द सहोदर की अवस्था कहा गया है।

यदि हम अभिव्यक्ति के माध्यम के आधार पर ललित कलाओं को वर्गीकृत करें तो संगीत कला का ही माध्यम सर्वाधिक सूक्ष्म है। इसका माध्यम मात्र ध्वनि है। ललित कलाओं के संदर्भ में माना गया कि अभिव्यक्ति का माध्यम जितना सूक्ष्म होगा, आनंद का स्तर उतना ही ऊंचा होगा।

वेरोज के अनुसार कला मनोवेग का प्रकाशन है जो रेखाओं, रंगों, रूपों के योग से अथवा ध्वनि, गति शब्दों के लयात्मक अनुक्रम से बाह्य प्रेषित होता है।

कलाकृति का जो तत्व इन्द्रियों को आनन्द प्रदान करता है वह है उसका छंद, लय, संतुलन, सामंजस्य और अनुपात, ध्वनि और मौन, रेखाएं और रंग, गहराई और सतह, चेष्टाएं और गतियाँ, प्रकाश और छाया, विराम और वेग आदि। इन्हें ही कलाकृतियों का सौन्दर्यात्मक तत्व कहा जा सकता है।[2]

संगीत कला का सौन्दर्य दिव्य है। संगीत मानव जगत को ईश्वर द्वारा दिया गया एक ऐसा वरदान है जो मधुर ध्वनि तरंगों का अथाह सागर है। कला में प्रयुक्त रंज्जकता, स्निग्धता, आकृष्टता, संवेदना आदि तत्व मिलकर ही सौन्दर्य शब्द को सार्थक करते है। संगीत कला अनुपम कल्पनाओं का एक भव्य प्रसाद है जिसे स्वर ताल, लय आदि के विविध संयोजन से गायन, वादन अथवा तत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। स्वर लय ताल के उचित संयोजन से ही रंज्जकता निहित है। संगीत का आधार है ''चिन्ताकर्षक नाद'। नाद ही संगीत का आधार है नाद के महत्व को मतंग मुनि ने इस प्रकार वर्णित किया है –

न नादेन बिना गीत, न नादेन बिना स्वरः।

न नादेन बिना ज्ञान, न नादेन बिना षिवः।।

अर्थात न नाद के बिना स्वर की उत्पत्ति सम्भव है, न नाद के बिना गीत रचना, न नाद के बिना ज्ञान प्राप्त हो सकता है और न ही नाद के बिना शिव (कल्याण) की प्राप्ति हो सकती है। नाद से ही श्रुति तथा श्रुति से ही स्वर की उत्पत्ति हुई है आरोह अवरोह के रूप में ली गयी अनेक स्वर संगतियों में काकु प्रयोग के साथ मधुर ध्वनि प्रवाह, लय एवं ताल मिलकर एक उत्कृष्ट संगीत रचना का निर्माण करते हैं। [3]

भारतीय संगीत में प्राचीन काल में ही, स्वरों में पड़ज–पंचम एवं शड़ज–मध्यम भाव से संवाद तत्व के आधार पर वैज्ञानिक स्वरूप से रागों की संरचनाएं की गयी है।

संगीत कला की अभिव्यक्ति में जब किसी कलाकार द्वारा किसी राग की अवतारणा की जाती है तो उसमें वादी संवादी स्वरों का उचित प्रयोग, कण, खटका मुर्की, मींड आदि सांगीतिक अलकरणों का उचित प्रयोग तथा राग के भाव के अनुसार ताल का सही निर्धारण सौन्दर्य वृद्धि में सहायक होते है। इस प्रकार स्वर, लय व ताल का उचित संयोग तथा स्वर लहरियों की अविरलता ही संगीत में सौन्दर्य आदर्श है।

सौन्दर्य का रस से विशिष्ट सम्बन्ध है। दोनों ही एक दूसरे के पर्याय हैं। सौन्दर्य का सम्बन्ध रस से जोड़ते हुए विद्वानों ने इसे आनंद का मूलभूत तत्व कहा है। उनके अनुसार

सौन्दर्यानुभूति का निर्माण करने में जो गुण सहायक है वे हैं माधुर्य, ओज एवं प्रसार। माधुर्य, कोमल एवं मधुरता की भावना से हृदय को द्रवित करने वाला, ओज, वीरता एवं तेज की भावना उत्पन्न करने वाला, प्रसाद मोहक, सरल व षांतचित्त की भावना को प्रदर्षित करने वाला है। इन तीन तत्वों के अन्तर्गत ही संगीत के माध्यम से सूक्ष्म या स्थूल रूप में अभिव्यक्ति की अनेक सुन्दर धाराएं प्रवाहित होती है। इस प्रकार हम कह सकते है कि संगीत में स्निग्धता, अविरलता, रंज्जकता विविध लय, भाव एवं ताल आदि का उचित प्रयोग, कलाकार की कल्पना भावाभिव्यक्ति तथा श्रोताओं के मन को आनंदित करने की क्षमता एक श्रेश्ठ संगीत रचना का आधर होती है। इसमें सौन्दर्य शास्त्र के कुछ आवश्यक तत्व जैसे औचित्य, अनुपात, रंज्जन, संतुलन विविधता आदि विशेष स्थान रखते है।

वाद्य संगीत पद विहीन होते हुए भी स्वरों, लय एवं ताल के उचित संयोजन से रसानुभति के एक विशिष्ट वातावरण का निर्माण कर देता है जो सुनने वालों को तन्मय होकर उस संगीत रचना का आनंद लेने को बाध्य कर देता है। यही कारण है कि संगीत कला को सभी ललित कलाओं में श्रेष्ठ माना गया है। संगीत कला अमूल्य है। यह मूल्यांकन से परे है। कलाओं के संदर्भ में कहा गया है कि आनंद का माध्यम जितना सूक्ष्म होगा, आनंद का उतना ही श्रेष्ठ होगा। और संगीत का माध्यम मात्र ध्वनि है। अतः संगीत कला से प्राप्त सौन्दर्य आनंद अनंत एवं असीम है।

ललित कलाओं में संगीत का स्थान

ललित कलायें मनुष्य के सौन्दर्यबोध की विकसित अवस्थाओं की परिचायक है ललित कलाओं में सौन्दर्य की अभिव्यक्ति विभिन्न माध्यमों द्वारा होती है तथा कलाओं की उत्कृष्टता उसके माध्यम एवं उससे अभिव्यक्त होने वाली अनंदानुभूति के स्तर पर होती है। हीगेल ने वास्तुकला को निकृष्टतम एवं काव्य कला को सर्वोत्कृष्ट माना है। श्री हंस कुमार तिवारी ने इसका खंडन करते हुए कहा है कि ''आधार की मूर्तता की मात्रा के अनुसार हीगेल ने काव्य को श्रेष्ठ एवं संगीत को उससे नीचे माना है किन्तु संगीत चूंकि नादात्मक एवं ध्वान्यात्मक है, इसलिए काव्य से भी अधिक अमूर्त है'' शाब्दिक व्यंजना के बिना केवल स्वरों के माध्यम से भी संगीत में प्रभावोत्पादकता जीवन्त रह सकती है। संगीत कला श्रोताओं के अन्तःकरण से सम्बन्धित होती है।

संगीत में किसी बाह्य आधार का आश्रय नहीं लेना पड़ता। वास्तुकला, मूर्तिकला एवं चित्रकला में किसी प्राकृतिक वस्तु के माध्यम से भावों को अभिव्यक्ति प्रदान की जाती है। काव्य में अभिव्यक्ति का माध्यम शब्द है किन्तु संगीत में अपने ही हृदय में उत्पन्न नाद के द्वारा भक्ति, श्रृंगार, करूण आदि रसों से परिपूर्ण भावों को व्यक्त किया जाता है। ऐन्द्रिय दृष्टिकोण से भी यदि देखें तो संगीत कला अन्य ललित कलाओं से आगे है। आध्यात्मिक एवं एकाग्रता एक दूसरे के पूरक है। संगीत में एकाग्रता से ही साधना प्रारम्भ होती है। स्वरित का उच्चारण एवं उस पर ठहराव ही आध्यात्मिक साधना का मार्ग प्रशस्त कर देता है। संगीत से प्राप्त आनंदानुभूति हेतु

स्वर सन्निवेश पर एकाग्रचित्त होकर ध्यान देना आवष्यक होता है, तभी संगीत में रंज्जकता की अनुभूति होती है। संगीत से संगीतज्ञ को वही लाभ होता है। जो योगी को यौगिक क्रिया करने से होता है। जिस प्रकार योग से चित्त की वृत्तियों का निरोध होता है उसी प्रकार संगीत से भी चित्त एकाग्र हो जाता है।[4]

मूल्यांकन की दृष्टि से भी यदि देखें तो वही कला उत्तम मानी जाती है। जो सर्वोत्कृष्ट आनंद की अनुभूति कराती है। डा. सत्यदेव चौधरी ने कला से प्राप्त आनन्द की तीन श्रेणियां बतायी है। ब्रह्मानंद, काव्यानन्द, विषयानन्द इनमें ब्रह्मानंद को सवोत्कृष्ट बताया गया है। संगीत में ही वह गुण है कि मनुष्य आनंद की चरम अवस्था में पहुंचकर आनंद के उस स्तर तक पहुंच जाता है जिसे ' ब्रह्मानंद सहोदर' की संज्ञा दी गयी है। श्रेष्ठ संगीत द्वारा जिस आनंद की अनुभूति होती है, वह आनंद चिरस्थायी होती है।

इस प्रकार हम देखते है कि संगीत का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। जहां शब्दों की भाषा मूक हो जाती है वहां मानव मन की भाषा स्वाभाविक अनुभूतियों को प्रकट करने में समर्थ होती है। रवीन्द्र नाथ ठाकुर के अनुसार ''जहां अभिव्यंज्जना में काव्य असमर्थ है वहां से संगीत की प्रथम सीढ़ी प्रारम्भ होती है।''

वस्तुकार जिस उल्लास भरी मुस्कान की मूर्ति को ईट पत्थर से गढ़कर प्रकट करता है, मूर्तिकार कठोर पत्थर को तराश कर जिसे स्पष्ट करता है, कवि जिसे शब्दों के ताने–बाने से संजोता है, संगीतज्ञ उसे मात्र स्वरों के उतार–चढ़ाव से ही मूर्तिमान कर सजीव कर देता है।

अन्य कलाओं की अपेक्षा संगीत के बाह्य आधार पर अविलंबित न होने के कारण सृजन प्रक्रिया में मनुष्य को एकमात्र अपनी आत्मा का प्रतिबिंब सम्मुख रखना पड़ता है। यह सुनने वाले के अर्न्तमन में स्थित रागात्मक चेतना को स्फूर्ति प्रदान कर विकास की ओर अग्रसर करता है। आंतरिक अनुभूतियों को अभिव्यक्ति प्रदान करने में सबसे अधिक समर्थ होने के कारण संगीत में सौन्दर्य तत्व की अत्यधिक आनंदानुभूति होती है, जो चरम आनंद की अवस्था होती है। आधार की सूक्ष्मता भावों की सार्वाधिक अभिव्यंजनात्मक क्षमता, सौन्दर्यानुभूति, सार्वभौमिकता, आनंद की उच्चावस्था के आधार पर ही संगीत को अन्य ललित कलाओं से श्रेष्ठ कहा गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. कलाबोध एवं सौन्दर्य
2. सौन्दर्य शास्त्र
3. भारतीय संगीत का सौन्दर्य विधान
4. भारतीय शास्त्रीय एवं सौन्दर्य षास्त्र
5. संगीत नवम्बर 1978

(Footnotes)

[1] कला बोध एवं सौन्दर्य पृ0 **25**

[2] सौन्दर्य शास्त्र पृ0 **106**

भारतीय संगीत का सौन्दर्य विधान

[3] संगीत नवम्बर 1978

[4] संगीत निबंध माला पृ0 **18**

संगीत मासिक पत्रिका 1980